विषय:हिंदी, स्नातक(प्रतिष्ठा),तृतीय वर्ष

वैश्वीकरण और हिंदी

आज संगोष्ठियों व सम्मेलनों में यह बहस का मुद्दा बना हुआ है कि क्या 21वीं सदी में हिंदी का भविष्य उज्ज्वल है, इससे रोजगार मिलेगा या नहीं, बहुराष्ट्रीय कंपनियों में मोटी तनख्वाह मिलेगी या नहीं, वगैरह-वगैरह। लोग संशय की स्थिति में हैं कि हिंदी में रोजगार मिलेगा नहीं तो फिर हम हिंदी पढ़ें क्यों\ आज नई पीढियाँ हिंदी की ओर आकर्षित नहीं हो रही हैं क्योंकि चिकित्सा, अभियांत्रिकी, सूचना प्रौद्योगिकी सहित कई विषयों की पाठ्य सामग्री की उपलब्धता हिंदी में नहीं के बराबर है। इंटरनेट पर जिन दस भाषाओं में सर्वाधिक सूचनाएं उपलब्ध हैं उनमें हिंदी का स्थान न के बराबर है।

संपर्क भाषा, राष्ट्रीय भाषा व विश्व भाषा के रूप में हिंदी के विकास परचम को देखते हुए यह आशांवित हुआ जा सकता है और इसे नई पीढ़ी भी अपना सकते हैं क्योंकि हम जैसे-जैसे दुनिया में आर्थिक रूप से उभर रहे हैं हमारी हिंदी की कद्र भी बढ़ती जा रही है। आज भूमंडलीकरण के वाहक बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ अपने उत्पाद को हिंदी के माध्यम से हम तक पहुँचना चाहती है। "नोबेल पुरस्कार विजेता विश्व बैंक के पूर्व अर्थशास्त्री जोसेफ स्टिंगलिट्स 'दि ऑब्जर्वर लंदन' के हवाले से कहते हैं कि भूमंडलीकरण जिस कार में सवार होकर दिग्विजय के लिए निकलता है उसके चार पहिए हैं - निजीकरण, पूँजी बाजार का उदारीकरण, बाजार आधारित मूल्य निर्धारण और मुक्त बाजार। भूमंडलीकरण अपने मुक्त व्यापार के लिए भाषा और संस्कृति को मोहरा बनाता है, वह एक ऐसी भाषा का निर्माण करता है जो गतिशील और अविश्वनीय होती है। उसने अपने बाजार का विस्तार करने के लिए बहुसंख्य लोगों की भाषा हिंदी को गले लगाया है।" यह तो सच है कि भूमंडलीकरण ने हिंदी की ताकत को पहचाना है तथा हिंदी का भूमंडल पर गाना-बजाना, साहित्य-संस्कृति का रंग-बिरंगा तराना आदि इसे विश्व की भाषाओं में सयाना का दर्जा दिए जा रही है। आज हिंदी की भूमिका संपर्क, संप्रेषण व सानिध्य की है, बॉलीवुड की फिल्में खाड़ी के देशों सहित एशिया, यूरोप आदि के देशों में खूब पसंद की जा रही हैं, कैरियर के लिहाज से भी अपरंपार संभावनाएँ हैं। तभी तो डॉ. किशोर वासवानी इन्हीं संभावनाओं के मद्देनजर हिंदी को उद्योग की संज्ञा देते हैं। आखिर उद्योग कहने का क्या अभिप्राय। क्या इस उद्योग में साबुन, शैंपू का उत्पादन होगा, तो हम कहेंगे कि नहीं, क्योंकि हिंदी भाव, प्रेम, वेदना, प्रतिरोध की चेतना से अभिभूत है। यहाँ यह कहना समीचीन होगा कि हिंदी एक भाषा नहीं बल्कि एक चेतना है। इस भाषा के समक्ष आज सबसे बड़ी चुनौती यही है कि कैसे इसे ज्ञान-विज्ञान की भाषा बनाएँ\

हिंदी के विकास के लिए सरकारी प्रयास किए जा रहे हैं अलबत्ता सी-डैक ने तो स्पीच एंड नेचुरल लैंग्वेज प्रोसेसिंग रिसर्च के तहत हिंदी के लिए सॉफ्टवेयर तैयार किया है। इस सॉफ्टवेयर के द्वारा आप हिंदी में बोलते जाएँगे कंप्यूटर टाइप करता जाएगा फिर उसे वह हिंदी में बोलकर भी सुनाएगा। हिंदी को तकनीक व कंप्यूटर से जोड़ने के लिए सी-डैक, पुणे ने मंत्रा सॉफ्टवेयर विकसित किया है जिससे कि विश्व की भाषाओं का मशीनी अनुवाद हिंदी में प्राप्त हो सके। इसी प्रकार से स्पीच टू टेक्स, टेक्स टू स्पीच सॉफ्टवेयर तथा विश्व के लोगों को आसानी से हिंदी सीखाने के लिए प्रबोध, प्रवीण, प्राज्ञ जैसे सॉफ्टवेयर विकसित किए हैं। भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर ने हिंदी का कार्पोरा तैयार किया, इससे किसी भाषा को इलेक्ट्रॉनिक रूप में परिवर्तित करके कंप्यूटर पर उतारा जा सकता है। इसी तरह आईआईटी, खड़गपुर ने 'अनुभारती प्रोजेक्ट' के तहत हिंदी को तकनीक से जोड़ने के लिए कई पाठों को ऑनलाइन करने में जुटा है। सी-डेक नोएडा मशीन अनुवाद के लिए ही 'ओसीआर' (ऑप्टीकल कैरेक्टर रिकॉग्नाईजेशन) सॉफ्टवेयर बनाया है जिससे कि कंप्यूटर पर हिंदी के पढ़े-लिखे रूप को पहचाना जाता है। अंतरराष्ट्रीय जगत के बीबीसी को लगा कि अब हिंदी के बगैर बाजार में टिकना संभव नहीं है, उसने 24 घंटे अपने समाचार पत्र को हिंदी में ऑनलॉइन कर दिया। माइक्रासॉफ्ट हिंदी में बाजार का विस्तार कर रही है वहीं गूगल जैसी सर्च इंजन भी हिंदी की ओर अभिमुख है। गूगल के मालिक एरिक श्मिट का मानना है कि अगले पाँच-दस वर्षों में हिंदी इंटरनेट पर छा जाएगी और अँग्रेजी व चीनी के साथ हिंदी इंटरनेट की प्रमुख भाषा होगी। अभी हाल ही में गूगल ने एलान किया कि हम एक लाख हिंदी व तकनीक प्रशिक्षु लोगों को भर्ती करना चाहते हैं। बड़ी कंपनियों को अच्छे जानकार लोग नहीं मिल रहे हैं। हिंदी के अच्छे स्क्रिप्ट लेखकों की माँग है लेकिन लोग मिल नहीं रहे हैं। देश-विदेश से प्रकाशित होने वाले समाचार पत्र-पत्रिकाओं के ऑनलाइन संस्करण पोर्टल, ब्लॉग, पोडकास्टिंग आदि की उपलब्धता ने रोजगार के कई अवसर खोले हैं। हिंदी चैनलों के कार्यक्रम निर्माण में लोगों को मोटी तनख्वाह पर रखा जा रहा है। एनिमेशन का कारोबार वैश्विक बाजार को लुभा रहा है। बॉलीवुड ने हिंदी को शिखर तक पहूँचाया है। कहा जाता है कि हरिवंश राय बच्चन ने कविता के माध्यम से हिंदी की सेवा जितनी भी की हो उससे कहीं ज्यादे उनके पुत्र अमिताभ ने बॉलीवुड फिल्मों के माध्यम से की है।

हमने हिंदी को रोजगार से जोड़ने के लिए कई पाठ्यक्रमों को हिंदी माध्यम से पढ़ाने का काम शुरू कर दिया है लेकिन हमें यह सोचना ही पड़ेगा कि हमारा इरादा नेक भी हो तो क्या फायदा, जिस महल में हमने आराम की जिंदगी जीने को सोचा है, उसके लिए हमने न तो ईंट, सीमेंट, गिट्टी आदि की व्यवस्था की और हमने खोल दिए नए पाठ्यक्रम। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय द्वारा हिंदी को अधुनातन ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में विकसित करने के नेक-नीयत से एमबीए, बीबीए, जनसंचार, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया प्रबंधन, आपदा प्रबंधन, समाज कार्य, फिल्म व नाटक आदि पाठ्यक्रमों को अनुसंधानात्मक प्रवृति से पढाई कराने का ही प्रतिफल है कि भारत सरकार ने चार विद्यापीठ की बजाय चार और विद्यापीठ (यथा-विधि, शिक्षा, प्रबंधन व मानविकी विद्यापीठ) शुरू करने की मंजूरी दी है।

कहने का आशय है कि सरकार प्रयास में है कि विधि, प्रबंधन की पढाई हिंदी माध्यम से हो। भले ही न्यायालयों में हमारी भाषा की उपेक्षा ही क्यों न होती रहें। संभवतः इस विश्वविद्यालय की सफलता को देखकर ही मध्यप्रदेश सरकार ने एक और हिंदी विश्वविद्यालय स्थापित किया है। देशी-विदेशी विश्वविद्यालयों में हिंदी माध्यम के नए पाठ्यक्रमों से नई पीढ़ी का झुकाव बढ़ रहा है। लेकिन प्रांतीय सरकारें, राजनीतिक स्वार्थ के कारण हिंदी का अहित कर रही हैं, महाराष्ट्र का भाषाई वार, या फिर गुजरात में हिंदी को पाठ्यक्रमों से निकाले जाने की स्वार्थसिद्धि से हमें लगता है कि नई पीढियों को कहीं न कहीं हम रोजगार के नए अवसरों से रोक रहे हैं तभी तो केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल के पूर्व उपाध्यक्ष **रामशरण जोशी** कहते हैं कि - "प्रत्येक भाषा केवल भाषा ही नहीं होती है अपितु वह समाज, संस्कृति, इतिहास, राष्ट्र और उनके भावी लक्ष्यों की अभिव्यक्ति का माध्यम भी होती है। अतः भाषा की संकीर्णताओं व पूर्वग्रहों से मुक्त होकर व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखने समझने की जरूरत है।" जहाँ तक बात है हिंदी भाषा की तो यहाँ कहना समीचीन होगा कि यह विश्व की तीन प्रमुख भाषाओं में अपना अहम स्थान रखते हुए भी उपेक्षा का शिकार रही है। राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक उहा-पोह में यह अपनी मुकाम हासिल नहीं कर पायी है। मजबूरी के तौर पर हिंदी को गले लगाने से जाहिर है कि क्रीम विद्यार्थी कंपनियों के ब्रांड मैनेजर बन जाते हैं और रही-सही लोग हिंदी के प्राध्यापक बनकर सिमट जाते हैं। एसएमएस की भाषा Are को सिर्फ R से या You की जगह सिर्फ U से इसी तरह बहुत से शब्दों को अँग्रेजी ने उत्तर आधुनिक तकनीक की भाषा विकसित कर ली है और उस तकनीक की चुनौती का सामना कर लिया है। अब सवाल यह है कि हिंदी सूचना प्रौद्योगिकी व तकनीक की चुनौती का सामना कैसे करे\ हम नई पीढियों की जरूरतों के मुताबिक पाठ्यक्रमों को हिंदी में उपलब्ध नहीं करा पा रहे हैं। "यदि हम अपनी भाषाओं से पूछें कि क्या उनमें साइबर स्पेस, भूमंडलीकरण, उपग्रहों की दुनिया, कंप्यूटर, टेस्ट ट्यूब बेवी, सूचना प्रौद्योगिकी, आर्थिक उपनिवेशवाद, अतियांत्रिकता, चिकित्सा-विज्ञान, प्रकृति-पर्यावरण, जनसंख्या-विस्फोट, आर्थिक, राजनीतिक और खेल जगत के घोटाले, आतंकवाद, संप्रदायवाद, अमीरी और गरीबी के बीच की दूरियाँ और ऐसे में जी रहे आदमी की मनःस्थिति के बारीक ब्यौरे जैसे कि मनुष्य के द्रोह, प्रेम, वेदना हड़बड़ी, भूख पर कितनी रचनाएँ लिखी गई। आज बदलते परिवेश में हिंदी को समय सापेक्ष नहीं कर पा रहे हैं, सबकुछ तीव्रता से घटित हो रहा है। जीवन और मृत्यु के बीच इतना कुछ अपूर्व और अद्वितीय घटित हो रहा है कि दोनों की परिभाषाएँ बदल गई हैं, हरएक का जन्मार्थ और मृत्यु-अर्थ आज अलग है। आपदाग्रस्त समाज और व्यक्ति की समस्याएँ, अनुभव और प्रसंग होते हुए भी लेखक चंद पुरानी या प्रचलित कथ्यसीमा में ही क्यों घूम रहा है\" लेखक की भाँति ही पत्रकार भी बाजारीय घटकों में शामिल होकर लाभ-मुनाफे के कार्यक्रमों को हमतक परोसती है। टीवी सीरियल्स से लेकर रेडियो जॉकी के कथ्य मध्यवर्ग को लुभाती है। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियों, मल्टीप्लेक्सों, विशालकाय मॉलों, स्पॉसेंटर के जरिए बाजार जिस ठाठ-बाट से भारत में आ रहा है वह उसके आकाओं की वर्षों पहले सोची-समझी साजिश का परिणाम है तब उन्हें बाजार के इस स्वरूप का भले ही पता न हो पर उनके सामने अपना स्वार्थ स्पष्ट था। आज वे ही छद्म भूमंडलीकरण, उदारवाद व कथित लोक कल्याणकारी योजनाओं के जरिए देश को बाजार और नागरिक को ग्राहक बना रहे

हैं। हमारा विरोध बाजार से नहीं है अपितु बाजारवाद से है। बाजारवाद में लाभ कमाने की व्याकुलता को नहीं रोका गया तो देश में विचार भी बाजार में कहीं तब्दील न कर दिए जाएँ। बाजारवाद में बाकायदा एक शिक्षा दिया जा रहा है - ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत। इस शिक्षा के लिए उसे ऐसी भाषा चाहिए थी जिसके भीतर राष्ट्रीयता के कीटाणु न हों और जाहिर है कि यह भाषा हिंदी के विस्थापन के बिना नहीं आ सकती थी। हम जानते हैं कि व्यक्ति की चेतना ही उसकी क्षमता निर्मित करती है, प्रतिरोध की चेतना को पूँजीवादी विचारधारा के हिमायतियों ने रौंदकर नव्य विचारधारा विकसित किया, जिसका संचालन व नियंत्रण बाजारवाद और कुछ छिपी ताकतों के माध्यम से होता है। इसमें लोगों के जीवन को सत्ता जैसी ताकत के माध्यम से खरीदकर करोड़ों जीवनों को व्यापार का अंग बनाया जाता है, यह तो साफगोई है कि आम इंसान भी जानता है कि उसे एक बड़े व्यापार का अंग बनाया जा रहा है, वह सोचकर भी इससे कट नहीं पाता है। पूँजीवादी बाजार में ऐसी कुछ चीज है जिसमें लोग शामिल रहें, उन्होंने अनिश्चिता व भागदौड़ तथा प्रतिस्पर्धी समाज विकसित किया है जिससे मानव जीवन समानता जैसे विचार से नहीं, अपितु क्षमता से संचालित होता है।

बहुराष्ट्रीय कंपनियों के निशाने पर छोटे बच्चे हैं, एक टूथपेस्ट कंपनी के सीईओ के अनुसार अगर आपके प्रोडक्ट का स्वाद बच्चे को अच्छा लग गया तो वह अगले 25 वर्षों तक आपका ग्राहक बन जाएगा। अतएव कहा जा सकता है आज भाषा-संस्कृति का मसला हाशिए पर है जबकि ग्राहक की नई जीजिविषा को बढ़ाना उसका अहम पहलू है। यहाँ हमें यह कहने में गुरेज नहीं है कि हिंदी को विस्थापित करने में हिंदी पुरोधाओं का भी योगदान है, वे बतौर 'स्टेटस' अँग्रेजी को अपनाते हैं। हमारा विरोध अँग्रेजी से कतई नहीं है, हमें तो अँग्रेजी क्या विश्व के किसी भी भाषा में उत्कृष्ठ रचनाएँ पढ़ने को मिले तो स्वागत करना चाहिए। यह भी तो सच है कि आज अँग्रेजी का विश्वव्यापी बाजार है, वहाँ पैसा है, यश है, मान है, सबकुछ है तो फिर नई पीढ़ी इसे क्यों न अपनाएँ। पर वह आत्म चेतना, राष्ट्रीयता, आत्मगौरव, मातृभाषा प्रेम, जन-चेतना कहाँ है\ जिसके कारण आजादी के बाद बीबीसी पर साक्षात्कार चाहने पर गांधीजी ने कहा था कि "दुनिया को खबर कर दो कि गांधी अँग्रेजी नहीं जानता है, गांधी अँग्रेजी भूल चुका है।" गांधीजी की यह तीखी प्रतिक्रिया इसलिए थी कि वे महसूस कर रहे थे कि राजनीतिक स्वाधीनता देश की संपूर्ण स्वाधीनता नहीं है। भाषाई गुलामी से मुक्त किए बिना देश इसकी पराधीनता की गिरफ्त में आ जाएगा। यहाँ मुझे याद आता है कि गणेश शंकर विद्यार्थी ने अपने पत्र 'प्रताप' के एक संपादकीय में कहा था कि "मुझे देश की आजादी और भाषा की आजादी में से किसी एक को चुनना पडे तो नि:संकोच भाषा की आजादी चुनूँगा, क्योंकि मैं फायदे में रहूँगा। देश की आजादी के बावजूद भाषा गुलाम रह सकती है लेकिन अगर भाषा आजाद हुई तो देश गुलाम नहीं रह सकता।" अँग्रेजी शिक्षा नीति को लागू करने के लिए जब चार्ल्स वुड ने प्रस्ताव पारित किया था तो उनका सीधा सा मतलब था - अपना कामकाज साधने के लिए नौकरशाह तैयार करने के साथ-साथ भारतीय लोगों में से कुछ लोगों को 'डी-क्लास' (वर्ग-पृथक) और 'डी-नेशन' (देश-पृथक) कर अपने अनुकुल बनाना। साथ ही उनका अंतिम लक्ष्य भारत की जनता में सुख-सुविधा की ऐसी होड़ जगाना था, जिससे ब्रिटिश माल

की खपत भारत में हो और नई-नई चीजों का बाजार तैयार हो सके। विदेशी भाषा के माध्यम से उपभोक्ता संस्कृति को निर्मित कर मानसिक रूप से गुलाम बनाने की वह नीति थी। आज इसकी फिर से पुनरावृति की लहर चली है मानवीय समाज की बजाय उपभोक्ता समाज में तब्दील किया जा रहा है। इसका जबाव हिंदी बखूबी दे सकती है। जिस प्रकार स्लम डॉग मिलेनियर के जमाल, जो विष्टा के गढ्ढे में कूदकर जोश, पुरूषार्थ और उमंग के मैदान में निकलते हुए किसी अप्रत्याशित नायकी को हासिल करता है। नई पीढ़ी को हिंदी में संसाधन उपलब्ध करा दें वह दुनिया में अपना परचम और भी बखूबी ढंग से लहरा सकते हैं। हम अपने बच्चों को सिर्फ बाजार में उपभोक्ता बनने के लिए न छोड़ दें अपितु अपनी भाषा के माध्यम से मानवीय समाज का एक अंग बनने दें।

इस एकलध्रुवीय शक्ति और वर्तमान परिवेश में पिछड़े व विकासशील राष्ट्र की जनता के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती है - अपनी सांस्कृतिक व भाषाई अस्मिता की सुरक्षा करना] क्योंकि समाज के वर्चस्ववादी शक्तियों के कारण सीमान्त समाज (सबाल्टर्न सोसायटी) की भाषा व बोलियाँ विलुप्त होने लगी हैं। अतएव विभिन्न राजनीतिक शासन प्रणालियों, आक्रामक बाजार और तकनीकी शक्तियों के भयावह परिदृश्य में यह और भी जरूरी हो गया है कि हिंदी जैसी सशक्त देशज भाषा के माध्यम से बहुआयामी लोकतांत्रिक संवाद प्रक्रिया को सुदृढ किया जाए। हिंदी को हृदय की भाषा कहने की बजाय ज्ञान-विज्ञान की भाषा के रूप में विकसित किया जाए ताकि पर्यावरण, चिकित्सा, उर्जा, पर्यटन, स्त्री-विमर्श, दलित-विमर्श जैसे विषयों को हिंदी माध्यम से समाज को नई दिशा मिल सके, अगर हिंदी को प्रौद्योगिकी व तकनीक की भाषा के रूप में विकसित नहीं करेंगे तो इससे युवा पीढ़ी या नई पीढ़ी नहीं जुड़ पाएँगे, इसलिए इनकी आकांक्षाओं के अनुरूप रोजगारपरक पाठ्यक्रम तैयार किया जाय ताकि बच्चे गर्व से हिंदी पढने के लिए आतुर हों, उसे यह हीनताबोध नहीं होगा कि हम हिंदी पढ़कर डॉक्टर, इंजीनियर या वैज्ञानिक नहीं बन सकते हैं। स्पष्टतः यह कहा जा सकता है कि हिंदी हर युग में इस देश की आवाज रही है। आज उसके सामने एक नई पीढ़ी है, जिनके स्वप्न हरे हैं वह त्वरित दुनिया के साथ कदम ताल से या यों कहें कि उससे भी आगे चलने को उत्सुक है, उसे अपनी भाषा में नवीनतम ज्ञान प्रौद्योगिकी, सम्मान, आत्मनिर्भरता, समृद्धि, जीवनयापन और उत्कर्ष से भरपूर अवसर मिलना चाहिए ताकि भारत का मस्तक और भी ऊँचा हो।

-डॉ अभिमन्यु कुमार